ISSN No. 2349-4654
नाद-नर्तन जर्नल ऑफ डांस एण्ड म्यूज़िक
वर्ष : 3, अंक : 1, अप्रैल 2016

जयपुर-अतरौली घराने की गायकी की विशेषताएँ

डॉ. प्रतिभा शर्मा
ए-203, होराइज़न बिल्डिंग, रहेजा विहार, चाँदीवली, पोवई, मुम्बई

शोध-पत्र

वर्तमान समय में जयपुर अतरौली एक ऐसी गायकी का नाम है, जिसे स्व. अल्लादिया खाँ जी ने विशेष लोकप्रिय बनाया। यद्यपि अल्लादिया खाँ साहब को संगीत की प्रारम्भिक शिक्षा अपने पिता ख्वाज़ा अहमद खाँ से मिली। तथापि पिता के स्वर्गवास के पश्चात् इन्होंने अपने चाचा जहांगीर खाँ से ही ध्रुपद, होरी तथा ख्याल की शिक्षा प्राप्त की। यह कहना गलत न होगा की अल्लादिया खाँ को ख्याल गायकी की ओर विशेष रूप से प्रवृत करने के लिए प्रेरणा स्त्रोत जहांगीर खाँ ही थे। परन्तु जयपुर नरेश महाराजा रामसिंह के दरबारी गायकों में मुबारक अली खाँ एक अत्यन्त धुरन्दर गायक थे। जिनकी गायकी का विशेष प्रभाव अल्लादिया खाँ की गायकी पर पड़ा। अपने पिता ख्वाज़ा अहमद खाँ, चाचा जहाँगीर खाँ की परम्परा युक्त गायकी के साथ जयपुर के प्रतिष्ठित गायक उस्ताद मुबारक अली खाँ की पेचदार गायकी ने भी उन्हें अपनी स्वतन्त्र शैली निर्माण करने में सहायता दी। उपरोक्त दोनों गायकी के संयोग से तीसरी ढ़गदार, ख़ूबसूरत गायकी अल्लादिया खाँ की स्वतन्त्र गायकी के रूप में प्रसारित हुई। अल्लादिया खाँ मुबारक अली खाँ की पेंचदार फ़िरत के बहुत बड़े भक्त थे। इसी कारण उन्होंने पेंचदार फ़िरत पर ही आधारित अपनी स्वतन्त्र गायकी का निर्माण किया। [1]

गायकी की दृष्टि से अतरौली घराने की गायकी-दिल्ली, आगरा व ग्वालियर गायकी का एक सुन्दर गुलदस्ता है। प्रत्येक काल और परिपेक्ष में हर सृजनशील कलाकार पर किसी न किसी महान कलाकार का प्रभाव पड़ता ही रहता है। जिससे उसकी प्रतिभा और खिल उठती है तथा गायकी में निखार आ जाता है। मुबारक अली खाँ के गायन में ऐसा ही असर अल्लादिया खाँ की गायकी पर पड़ा, इससे पता चलता है कि संगीत कला के एक ही पौधे में कितने रंग के फूल विकसित हो सकते हैं। [2]

जयपुर घराने में गायकी की विशेषताएँ प्रखरता से विद्यमान हैं। लेकिन इन विशेषताओं के बावजूद जयपुर घराने की गायकी में कुछ ऐसे तत्व विद्यमान हैं जिनका विस्तार से उल्लेख करना अति आवश्यक है।

इस घराने में आवाज़ के लगाव की पद्धति अतयन्त स्वाभाविक तथा आकृत्रिम है। खुली एवं साफ सुथरी आवाज तथा सहजता इनकी विशेषता है। मन्द्र, मध्य व तार तीनों सप्तकों में ऐसी खुली और साफ आवाज इस घराने के सभी कलाकार लगाते हैं। बन्दिश की रचना के शब्दोच्चार अत्यन्त कलात्मकता से और कोमलता से किए जाते हैं। [3]

स्थाई पूर्ण हो जाने के बाद विलम्बित के आलाप प्रारम्भ होते हैं। बन्दिश के अंग से ही गायकी गाई जाती है। एक स्वर से दूसरे स्वर पर जाते समय दोनों स्वरों के बीच के अन्तर को सर्प के समान घसीटते हुए जाते थे इसे मारूलकर जी सर्पगति कहते हैं। इसी गति का उपयोग वे अपने गायन में करते हैं। [4]

उन्हीं के शब्दों में शास्त्रकारों ने संगीत में स्वर विस्तार की दो गति बताई हैं। (1) सर्पगति (2) मंडूक गति।

इनमें अन्तर इस प्रकार है—एक कोस अन्तर अगर सांप और मंडूक दोनों को ही काटना है तो सांप उस अन्तर के प्रत्येक बिन्दु को स्पर्श करके घसीट के जाएगा और मंडूक उस अन्तर को छोटी-छोटी छलांगे मारकर अर्थात् प्रत्येक बिन्दु को स्पर्श न करते हुए बीच-बीच में छोड़कर पूरा करेगा। एक स्वर से दूसरे स्वर पर जाते समय बीच की सभी श्रुतियों से होकर जाना वह 'तंत-अंग' है। बीन-वादन में मुख्यत: यही क्रिया होती है। यह 'तंत-अंग' जयपुर घराने की गायकी में अत्यन्त स्पष्ट दिखाई देता है। [5]

जयपुर-अतरौली घराने की आधारभूत विशेषताएं निम्नलिखित हैं:

1. यह गायकी आकारयुक्त स्वर लगाव पर आधारित गायकी है।
2. इस गायकी में आवाज बनाने की अपनी एक स्वतन्त्र शैली है।
3. खुली आवाज में ही पूर्ण गायन प्रस्तुत किया जाता है।
4. वक्र एवं बलपेंच युक्त तानों का गायन इस गायकी की प्रमुख विशेषता है।
5. राग प्रस्तुतिकरण में तीनों सप्तकों में आवाज़ का आकार युक्त लगाव समान रहता है।
6. यह गायकी स्वर व लय को समान रूप से लेकर चलती है।
7. अनवट राग एवं जोड़ राग इस घराने में विशेष रूप से गाए जाते हैं।
8. ख्याल गायन में गीत की विशेष एवं संक्षिप्त बंदिश होती है।

इन विशेषताओं के बावजूद जयपुर घराने की गायकी में कुछ ऐसे तत्व हैं, जिनका विस्तार से उल्लेख करना अति आवश्यक है। जयपुर घराने में आलापी लय के अनुरूप रहती है। केसरबाई, मंजी खाँ, लक्ष्मीबाई जाधव, तानीबाई एवं श्रीमती मोघूबाई के गायन में आलापी का ऐसा

अविष्कार देखा है। आलापी लय सहित एवं लयविरहित दोनों प्रकार की मान सकते हैं। श्रीमती किशोरी अमोनकर ने आलापी का अधिक प्रयोग अपने गायन में किया, यथापि उनकी आलापी में कभी-कभी सूक्ष्म लय का ध्यान रखा हुआ देखने में आता है। कुछ प्रतिष्ठित गायकों की लयरहित आलापी को संगीत में प्रधानता मिल गई थी और ऐसी आलापी को ही आलापी मानना चाहिए ऐसी एक धारणा थी, और है। किशोरी जी ने भी जयपुर गायकी में भावात्मक आलापचारी स्वीकृत की जो ताल की मात्राओं से अथवा उसके अंश भाग से सन्दर्भ न रखने वाली थी, फ़िर भी उनके रोम-रोम में बसी जयपुर गायकी उभरकर ऊपर आती है, जिसमें ताल मात्राओं का सन्दर्भ रहता है।

प्रत्येक घराने का एक अनुशासन रहता है और गायक उसी अनुशासन में गाता है। सादर करने में समसमानता आना संगीत और घराने का कायदा है अर्थात् भिन्न-भिन्न रागों में गायकी प्रस्तुत करते समय सरगम अमान्य नहीं, किन्तु सरगम गाकर नवीन आयाम निर्माण करने चाहिए, जो गा रहे हैं, उसी का नोटेशन कर रहे हैं, ऐसा न हो। सरगम एक नृत्य संकल्पना है और वह वैसे ही प्रतीत होनी चाहिए। अमान अली खाँ अत्यन्त सुन्दर सरगम करते थे। लयकारी में सरगम करने के लिए स्वतन्त्र मेहनत की आवश्यकता है। जयपुर घराने में किसी ने सरगम लगाई तो वह उसकी स्वतन्त्र संकल्पना होगी। उस सरगम ने नवीन आयाम दिए तो वह स्वागत योग्य होगी, अन्यथा नहीं।

ख्याल की बंदिश में शब्दार्थ से व्यक्त होने वाला भाव अधिक महत्व का है। ख्याल की बंदिश के शब्दों का भावगीत अथवा ठुमरी के समान साहित्यिक दृष्टि से महत्व नहीं है। बंदिश की कविता का अर्थ दृष्टि महत्व नहीं है। कई बार वे ही शब्द पुन: आते हैं। अंतत: राग का भाव सुरों के द्वारा ही व्यक्त होना चाहिए, यह स्वर भाव शब्दों के परे होता है और वैसा ही रहना चाहिए। अत: गायक बंदिश के शब्दार्थ को अधिक महत्व न दे तो ही ठीक है। अर्थात् शब्दार्थ उसको प्राणित होंगे किन्तु वह गाए गए स्वर के अर्थ से। बंदिश प्रस्तुत करते समय गायक जब बोल-तान आदि करता है, तो शब्दों का उच्चारण संगीतानुवर्ती होना चाहिए, साहित्यानुवर्ती नहीं।

जयपुर गायकी अधिक बुद्धिमान है। उसमें बंदिश प्रस्तुति, आलापी, तानक्रिया आदि सभी क्रियाएं लयसम्बद्ध होती हैं। उसमें विराम भी विशिष्ट पद्धति से और लय में ही किया जाता है। इस गणिती विस्तार में रंजकता का ध्यान अवश्य रखा जाता है। आलापी करते समय भावना की ओर दुर्लक्ष्य नहीं होती। बोल-तान में भी शब्द की कसरत अथवा उनका दबाना नहीं होता और सादा बंदिश का मुखड़ा प्रसन्न कैसे रखा जाए, इस पर ध्यान दिया जाता है।

बंदिश श्रोताओं के सम्मुख रखते समय और आलाप, बोलतान, तान आदि अलंकरित क्रियाओं द्वारा उसका विस्तार करते समय प्रत्येक आवर्तन में एक या अधिक सौन्दर्य बिन्दु की कल्पना करके उनकी इस प्रकार रचना करनी पड़ती है कि श्रोताओं को इस बिन्दु तक की यात्रा उत्कण्ठावर्धक हो। उत्कण्ठा का यह उत्कर्ष बिन्दु बंदिश के मुखड़े को लगकर ही किन्तु किंचित पूर्ण रहता है। संक्षेप में श्रोताओं में उत्कण्ठा निर्माण करना, अपेक्षित अवस्था तक उसे बढ़ाना और फ़िर उसका विसर्जन करना, यह 'सिद्धि' गवैयों को साध्य होना आवश्यक है। इससे श्रोताओं के अन्त:करण की तार ऐसी खिंच जाती है, जिससे उसकी चित्तवृश्रि आनंदविभोर हो उठती है और इस उत्कण्ठा की सुखदपूर्ति करके उन्हें 'सम' स्थिति में लाया जाता है। संगीत सौन्दर्य प्रणाली का यह महान तत्व है। इसी को समपद जाना कहते हैं। इस तत्व का निर्वाह जयपुर घराने में अतिदक्षता से होता है। आज की पीढ़ी में भी यह देखने को मिलता है (अत्यन्त सुडौल पद्धति से, मानों नृत्यांगाना के विभ्रम एवं पदन्यास का स्मरण दिलाते सम पर आना जयपुर घराने की विशेषता है) टेन्शन और रेजोल्यूशन वह सभी घरानों को लागू होने वाला फायदा है। किन्तु उसका इतनी दक्षता से पालन इस घराने में और विशेषकर मोघूबाई के गायन में होता रहा है। किसी बंदिश को पेश करने पर ताल के एक आवर्तन की रचना ऐसी रहती है कि रचना में एक के बाद स्वर ऐसा रखा जाता है जिससे एक की दूसरे के पृ.-भूमि एवं दूसरे की पहले को पुरो भूमि प्राप्त होकर दोनों प्रकाशित होते हैं।

जयपुर अतरौली घराने की गायकी में आलाप के बाद बोल अंग से लय थोड़ी बढ़ाकर आलाप तथा छोटी-छोटी तानें ली जाती है। इनके विलम्बित आलाप में धुपद अंग के गमक एवं टप्पा अंग का प्रयोग कुशलता से किया जाता है। इनके बाद बोल तानें या अन्तिम लय में तानों की फ़िरत इस प्रकार से गायकी की बढ़त होती है। तानें अत्यन्त पेंचदार, दानेदार, गमक युक्त और लय के साथ विशिष्ट कटाव युक्त होती हैं। इनकी तानों की प्रक्रिया के सम्बन्ध में डॉ. मारूलकर जी कहते हैं—''ग्वालियर घराने में वक्र रागों में भी सीधी-सीधी तानें करने की प्रथा है, और जयपुर घराने में सीधे-सरल रागों में भी वक्र तानें ली जाती हैं। [6]

इस घराने की महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि स्वर प्रधानता जो आगरा घराने की विशेषता है, इन दोनों का सुन्दर समन्वय इनकी जयपुर की गायकी में दिखाई देता है। इसे प्रो. वामन हरि देशपांडे जी ''स्वर लय का सुप्रमाणित मिलाप'' कहते है। जयपुर गायकी में स्वर और लय का मेल व जोड़ बिठाने की क्रिया योजनापूर्वक की जाती है, कम से कम वैसा करने की पूरी-पूरी कोशिश की जाती है। इस गायकी में बेहद पेंचदारपन व सूक्ष्मता होते हुए भी स्वर में एक प्रकार की मनोरम कोमलता तथा लय की दुलराहट प्रतीत होती है। अल्लादिया खाँ साहब अक्सर कहा करते थे—''आप लोग हमारी गायकी की इतनी तारीफ़ करते हैं, वह गायकी मुबारक अली की तुलना में कुछ नहीं है। कहां ज़र्रा कहां आफताब, मैं जो कुछ हूँ ,उन्ही का सुन-सुन कर बना हूँ। ''[7]

इस घराने में वक्र और प्रचलित रागों को गाने का विशेष रिवाज है। कान्हड़ा के प्रकार, नटगौरी, बिहागड़ा जैसे कठिन और अगेय तथा जोड़ राग गाते समय भी वे सहजता एवं कुशलता से विस्तार पूर्वक गाकर श्रोताओं को प्रभावित करते थे। गाते समय विषम लय का प्रयोग करना इस घराने की एक और विशेषता है। उदाहरण के लिए—तीन ताल के धा, धीं, धिं धा में ध: धी धीं + धा ऐसे वज़न की अपेक्षा धा धी + धि

धा इस प्रकार के वज़न से बन्दिश व गायकी गाना, एक विशेषता के कारण इनकी गायकी अलग ही सौन्दर्य रूप धारण करती थी। [8] बंदिश का भिन्न-भिन्न अलंकारों द्वारा विस्तार करते समय हर अलंकार नितान्त सुन्दर बनाना चाहिए और वह वैसा टिकाना चाहिए।

संगीत का प्रत्येक प्रकार गायकी के प्रस्तुतिकरण का स्वतन्त्र अविष्कार है। हर एक का अपना रंग, ढंग और सौन्दर्य है। उसी लहज़े में वह अभिव्यक्त होना चाहिए। नाटक का पद भावगीत न बने, ठुमरी ठुमरी ही रहे और ख्याल गंभीर ही बना रहे। पुराने गंभीर और स्तर के ख्याल की अपेक्षा आज का ख्याल ठुमरी के निकट इसलिए है कि उसमें स्वर रचना की अपेक्षा शब्दार्थ की ओर अधिक ध्यान दिया जाने लगा है। बंदिश की कविता को अनुचित महत्व देने पर ख्याल की ठुमरी हो जाती है। उसमें तान, बोल-तान वर्जित होकर ठुमरी की सीमारेखा नष्ट होती है अथवा क्षीण होती है। उपरोक्त बातों को ध्यान में रखकर ही संगीत में सौन्दर्य अविष्कार किया जाता है। जो जयपुर घराने के कलाकारों ने कर दिखाया है, इसी कारण आज इस घराने की गायकी सर्वाधिक लोकप्रिय मानी जाती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. संगोराम, श्रीरंग (1973) मुक्त संगीत सम्वाद, गानवर्धन संस्था, आर्शीवाद बंगला, मुकुंद नगर पूर्ण, पृ. 107-108.
2. खुराना शन्नो, ख्याल गायकी में विविध घराने, सिद्धार्थ पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, पृ. 28.
3. मारूलकर, नारायण राव, संगीततील घराणी, स्वरगंध प्रकाशन, गोआ, पृ. 118.
4. श्री खण्डे, सुरेश गोपाल, हिन्दुस्तानी शास्त्रीय गायन की शिक्षा प्रणाली, अभिषेक पब्लिकेशन, चंडीगढ़, पृ. 122.
5. मारूलकर, नारायण राव, संगीतातील घराणी, पृ. 119.
6. वही, पृ. 121.
7. देशपांडे, वामन हरि, घरन्दास गायकी, मोज प्रकाशन, मुम्बई,पृ. 126